-अशोक कुमार

ए मेरे प्यारे वतन

-अशोक कुमार

ए मेरे प्यारे वतन

--अशोक कुमार

बम्बई का एक उपनगर है अँधेरी और अँधेरी में एक कॉलोनी है वृन्दावन सोसाइटी. वृन्दावन सोसाइटी में सब प्रकार की सुविधाएँ हैं. दूध,तरकारी,होटल,खाना,पसरट्ट ,नाई, धोबी- सब ! नहीं है तो बस दो चीज़ें एक बेकरी और दूसरी अंडे बेचने वाला. इन दोनों चीज़ों की कसर पूरी करता था इदरीस. साइकिल पर आता था- दिन में दो बार - सुबह और शाम - अपनी साइकिल की घंटी लगातार टन्टनाता हुआ. सोसाइटी में चार मंज़िला इमारतें थीं,ऊपर तक उसकी घंटी सुनाई देती थी. जो रोज़ के बंधे ग्राहक थे उनके यहाँ तो इदरीस चौथी मंज़िल तक चढ़ कर अंडे ऑर पाओ दे आता था.जो बंधे नहीं थे,क़भी कभी के ग्राहक थे, वे या तो अपने फ्लैटों से नीचे उत्तर कर जो चाहिए होता ले लेते थे या इदरीस को सीढ़ियों पर रोक कर खरीदारी कर लेते थे.

बम्बई में ये अंडे वाले सिर्फ अंडे वाले नहीं होते. ये पान वालों की तरह आदत होते हैं. यानी अगर रोज़ वाला न आए तो लोग कहते हैं ' अपना अंडे वाला आएगा तो ले लेंगे'. इदरीस अपने ख़ुलूस की वजह से कइयों का 'अपना अंडे वाला' था. हमारे यहाँ भी इदरीस ही अंडे दे जाता था. रोज़ाना पिछले तीन सालों से. जाड़ा, गर्मी,बरसात- मौसम कोई भी हो. सिवाय साल में एक महीने के जब वो 'वतन' चला जाता था.

इदरीस लखनऊ के पास कन्नौज के किसी क़स्बे का था. यू.पी. के ही तीन चार लोगों के साथ मिलकर वो पास ही की बस्ती में एक 'खोली' में रहता था. सुबह फज्र की अज़ान के बाद ही निकल लेता था.पास की शब्बीर मियां की बकरी से ताज़े पाओ,बन,ब्रून,अंडे खरीदता था.उन्हें साइकिल के दोनों तरफ थैलों में भर भर कर लटकता था.फिर अंडे की तमाम 'ट्रे' एक के ऊपर एक जमा कर साइकिल के पीछे वाले कैरियर पर बाँधता था. उसके बाद पैदल सोसाइटी -सोसाइटी जा कर अपना माल बेचता था. वह हमेशा सफ़ेद चौड़ा पायजामा और लम्बी बाँहों वाली कमीज पहनता था-जिसकी बाहें मोड़ कर वो कोहनी के ऊपर तक कर लेता था. उसके कपड़े निहायत सफ़ेद और साफ़ सुथरे होते थे. कभी किसी ने उसे किसी भी बात की शिकायत करते नहीं सुना. हाँ ! उसे वतन की याद अलबत्ता हमेशा सताती रहती थी,घर वालों की निहायत परवाह रहती थी और इन बातों का इज़हार वो अक्सर किया करता था. इदरीस क़रीब अट्ठाइस -तीस साल का रहा होगा.वतन में उसका एक छोटा सा घर था जिसमें उसकी नौजवान पत्नी,एक नौनिहाल बच्चा और एक बूढ़े मामू रहते थे. इदरीस का दिल उन्हीं लोगों में बसा रहता था.

-"तो तुम यहाँ पड़े क्यों हो? कन्नौज बड़ा शहर है. ज़रूर वहां ऐसे ज़रिये होंगे जिनसे तुम्हें इतना तो मिल ही जायेगा कि तुम ठीक ठाक गुज़ारा कर सको." एक दफा में ने उससे कहा था. हालाँकि ये बात मैं ने कही उससे थी लेकिन शायद

यह बात मैं ने कहीं अपने आपसे भी कही थी क्योंकि मैं भी यू.पी.का था और इतने सालों बम्बई में रहने के बाद भी मेरा दिल-दिमाग़-रुह सब 'वतन' की याद में रहते थे. व्यथा ये थी कि मैं जा नहीं सकता था. काम सारा यहीं था और 'वतन'का घर भाइयों ने बेच डाला था. सो वहां कोई ठिकाना नहीं बचा था.

-"बात तो आपकी ठीक है,"इदरीस बोला,"रोज़ी के साधन हों तो घर कौन छोड़ता है. लेकिन वहां कमाई की इतनी गुंजाईश नहीं है."

-"और यहाँ है?......खर्चे देखो यहाँ के !"

-"साहेब खर्चे निकाल के भी चार-पांच हज़ार घर भेज लेते हैं. यहाँ तो किसी तरह पेट काट के गुज़ारा कर लेते हैं.... और किसलिए....इसलिए कि घर वाले खुश रहें,ठीक से रहें.......वरना यहाँ क्या है अपना !" इदरीस ने अंडे गिन कर बर्तन मैं रखे,पैसे लिए फिर चलते चलते बोला,"अब मक्खी तो साहेब वहीँ जाएगी न जहाँ गुड होगा !........नहीं तो हियाँ काहे को झख मारते फिरते ."

रमज़ान का महीना तक़रीबन आधे से ज़्यादा हो चुका था.एक दिन शाम के वक़्त इदरीस अपने साथ एक और आदमी को लाया.

-"साहेब ....हम जा रहे हैं मुलुक...ईद आ रही है....अब कल से ये आएंगे आपको सामान देने."

-"ईद में तो अभी वक़्त है!"

-"है तो पर दो चार दिन हमें सामान-ओमान खरीदने को चाहिए फिर दो दिन लगेंगे सफर में. जब पहुंचेंगे तब ईद बस आई ही समझो."

-"रोज़े रखे हो?"

-"बिलकुल ! पूरे के पूरे करता हूँ...हर साल....अल्लाह हम पर, हमारे परिवार पर रहम करेंगे!"

-"वापसी कब है?"

-"महीना भर तो लगेगा साहेब......अब इतनी दूर गए तो जल्दी क्या आना."

लेकिन इदरीस पंद्रह दिनों मैं हीवापस आ गया.

-"अरे तुम तो कहते थे लम्बे रहोगे?!" में ने पूछा.

-"हमारे साथ वो हादिसा गुज़रा कि अब क्या बताएं......!"

-"क्या हुआ ?"

-"हमारे यहाँ डाका पड़ गया."

-"डाका....?!"

-"अरे उधर के लोग बड़ा जलते हैं. समझते हैं कि ये बम्बई में हैं बड़ा माल कमाए हैं...चलो लूट लो साले को. अब किसी को क्या बताएं कि यहाँ क्या क्या तो भुगतते हैं और क्या तो कमा लेते हैं."

-"हुआ क्या ?"

-"ईद के बस दो दिन बचे थे जब हम पहुंचे. घर पहुंचे ही थे,सामान आँगन में रखा ही था कि बाहर से पुकारे गए. सुल्तान था- हमारा दोस्त- अंदर आया. उसने दो सन्दूक़ और एक बैग देखा तो बोला," अरे भाई वाह !...पूरा बम्बई उठा लाये क्या?" में ने कहा अभी बस चला ही आ रहा हूँ तुम्हें इती जल्दी खबर भी लग गयी ! हमने कहा बैठो चाय-ओये पियो....बोला नहीं,कुछ काम है चलो ज़रा बाजार तक हो आएं. हमारी जोरू ने कहा भी कि ऐसा क्या काम है....यहीं कह दें.....दो दिन के सफर से आदमी आया है ज़रा आराम तो करने देओ. लेकिन सुल्तान बचपन का साथी रहा था, जाना पड़ा.

काम क्या था ये तो पता नहीं चला बस घूमते रहे इधर उधर.फिर एक दुकान में बैठकर चाय-ओये पी इतने में वहां सुल्तान का कोई दोस्त आ गया.हम तो उसे जानते नहीं थे. कभी देखा ही नहीं था. थोड़ा नाटा सा था,उभरी उभरी सी ऑखें और बोलता यूँ था कि ज़रा आवाज़ चढ़ाये तो उसकी खांसी निकल पड़ती थी. फ़य्याज़ या ऐसा ही कुछ नाम बताया सुल्तान ने. जब वो चला गया तो सुल्तान ने कहा,'यार बड़ी मुश्किल में हूँ....ईद का त्यौहार है और जेब में कौड़ी नहीं है....मुझे पांच सौ रूपए दोगे?' हमने कहा-पांच सौ तो हमारे पास नहीं हैं,जो पैसे थे उसमें तो हम घर के लिए सामान ले आये. बाक़ी बचे सो किराये में लग गए...हाँ पच्चीस-पचास की बात हो तो कहो....

सुल्तान मेरी पीठ पर हाथ मारते हुए मुस्कुराया, बोला 'कोई बात नहीं दोस्त, अल्ला देगा !'

बात गयी आई हो गयी.

बीबी इतने दिनों से चूड़ियों की ज़िद किये थी सो इस बार मै उसके लिए दो सोने की पतली सी चूड़ियाँ ले गया था. वो खुश हो गयी. उसकी ख़ुशी देख कर मेरी आँखों में आंसू आ गए. उस बेचारी को आजतक कुछ दिया ही नहीं था मै ने. बच्चे के लिए कुछ कपडे थे और मामू के लिए कुरता. वो दिन गुज़र गया. दूसरे दिन ईद की छोटी मोटी खरीदारी करनी थी.मामू कई बार लिख चुके थे कि उनकी आँखों में बड़ी तकलीफ है. दिखाई ही नहीं देता ठीक से. तो तय हुआ कि ईद हो जाये फिर मामू की ऑखें डाक्टर को दिखाई जाएँगी .

उस शाम ईशा की नमाज़ के बाद तराबियाँ कर के हम जब घर वापस आये तब रात काफी हो चुकी थी. सो आये और सो गए. चाँद दिख चुका था. दूसरे दिन ईद थी.

रात के कोई एक- दो बजे का वक़्त रहा होगा- शायद और भी रहा हो - कि अचानक नींद खुली .देखा कि हमारी चारपाई के चारों तरफ दो तीन लोग खड़े हैं-बंदूक ताने ! एक दुनाली हमारी गर्दन पर एक बीवी के. मामू को किसी ने गर्दन से पकड़ रखा था.यक़ीन तो नहीं आया. लगा सब ख्वाब है. ऐसा सुना था,फिल्मों में देखा भी था मगर ये तो सचमुच और

वो भी हम लोगों के साथ ! बंदूक वाले अपने मुंह पर काला कपड़ा और सर पर काला साफा बांधे थे. पहचानना मुश्किल था. हमारी नींद खुली तो जैसे ही उठने को हुआ कि दोनाली हमारी गर्दन पर आदमी ने गड़ा कर कहा ,"उठो मत."

हमने पूछा,"कौन हो तुम लोग?"

-"बोलो मत"

-"क्या चाहते हो?"

उधर से उसने अपने साथी को आवाज़ दी,"बाँध लो सब कुछ."

"इसमें ताला बंद है" वहां से आवाज़ आई.

बंदूक वाले ने हमारी गर्दन पर नली गड़ा कर पूछा,"चाबी कहाँ है?" हमने कहा,"हमारे पास है.....उठें तो दें" वो बोला "आवाज़ निकली तो गोली मार देंगे."

हम उठे. बंदूक गर्दन पर बराबर अड़ी रही. हम ने चाबी दी. जिसको चाबी दी उसकी आँखों पर इत्तेफ़ाक़ से हमारी नज़र पड़ी.उसने भी हमें देखा. हमें लगा कि कहीं इसे हमने देखा है. हमसे रहा नहीं गया. हम बोले," तुम्हारी सूरत जानी-पहचानी है." वो तैश में लेकिन दबी ज़बान में बोला,"चुप ! बोले तो गोली मार देंगे"

"लेकिन....."

"चुप !" वो दबी चीख जैसी आवाज़ से चिल्लाया और उसके एक अजीब सी खांसी नकल गयी. जो कि हमने कहीं सुनी थी लेकिन याद नहीं आ रही थी के कहाँ. बहरहाल,लूट-पाट के सब ले गए और जाते जाते कह गए कि अगर पुलिस को इत्तेलाह की तो समझ लो खैर नहीं."

अब हम तो बम्बई चले आते हैं.वहां रहते हैं जोरू और मामू तो उनको कुछ हो जाये इससे तो हमने सोचा ख़ामोश ही रहो, चलो जो गया सो गया.जो जिसमें सो रहा था बस वो ही बचा.

ईद तो फिर समझिए कि बस गयी....क्या रहा?! लेकिन खटक ये रहा था कि वो ऑखें जानी पहचानी सी कैसे लगीं थीं. हो न हो कहींदेखा है. सोचते रहे कहाँ देखा है,कहाँ देखा है. फिर ख्याल आया कि हो न हो ये वो ही आदमी था जो सुल्तान के साथ बाजार में उस दिन मिला था.

सुल्तान से मिले. बोला,"कौन यार?" हमने कहा वो ही जिससे उस दिन बाजार में तुमने मिलवाया था,जिसने अपने साथ चाय पी थी." सुल्तान बहुत सोच के बोला,"अच्छा...अच्छा !...वो....अब क्या मालूम कहाँ होगा साला....वो तो कानपूर में रहता है. आ जाता है कभी कभी." हमे तो बात लग गयी थी. हम कानपूर गए. वहां देखा कि जो पता सुल्तान ने दिया था उस पर तो कोई और ही रहता था. हम वापस आ गए.

-"तो तुम्हें लगता है," में ने पूछा, "सुल्तान ने तुम्हारे यहाँ डाका डलवाया ?"

-"अब साहेब सुल्तान बचपन का साथी रहा है . साथ खेले खाए हैं तो यक़ीन तो नहीं आता लेकिन वो आदमी जिससे उसने उस रोज़ बाजार में मिलवाया था हो न हो था वो ही उस रात..वैसी ही उसकी उभरी उभरी ऑंखें और जब उसने दबी आवाज़ में कड़क के हमसे 'चुप' कहा तो कहते ही वो खांसा और वैसी ही खांसी जैसी उस दिन उस आदमी ने खांसी थी."

-"शायद," में ने अंदेशा जताते हुए कहा, "उस शख्स को मालूम पड़ा हो कि तुम बम्बई से आये हो. सुल्तान ने बताया हो कि तुम बड़े पैसे वाले हो और ये सुन कर उस अकेले ने ही ये काम किया हो. सुल्तान का इसमें कोई हाथ न हो."

-"हम भी यही समझते ....लेकिन कल तो आप बड़े अपनापे से मिले,चाय पी,नाश्ता किया,गले लगे और फिर ये के हमें मालूम नहीं कि वो आदमी कौन है, कानपूर में रहता है,पता नहीं है और फिर जब पता दिया तो ग़लत....तो क्या अंदाज़ा लगाये कोई ! ज़ाहिर तौर पर कुछ कह नहीं सकते लेकिन शक तो होता ही है."

-" यू .पी. में तो आस-पड़ौस मददगार होता था." में ने कहा.

-"होता था अ आ ......! अब तो लूट पाट आम है. बताइये हम कौन से धन्ना सेठ हैं, हमारे ही घर में डाका पड़ गया,तो जो पैसे वाले हैं उनकी तो बात ही क्या होगी!?"

-"तो जल्दी क्यों आ गए ? जो होना था वो तो हो ही गया. थोड़े दिन और रहते तो घर वालों को भी राहत होती."

-"अब साहेब सोचा है कि वहां की ज़मीन/मकान बेच-बाच के हियाईं कहीं दूर सही छोटी सी जगह ले के रहेंगे. यहाँ कम से कम लूट-पाट डाका-वाका का डर तो नहीं है. क़ानून व्यवथा तो बराबर है.यहाँ कम से कम सुकून से तो रहंगे."

-"चोरियां तो यहाँ भी होती हैं."मै ने कहा.

-"बंदूक की नोक पे बीच सड़क तो कोई नहीं लूट लेता. रात-बिरात बहन-बेटी की सुरक्षा तो है. दंगा फसाद लफंगई तो नहीं है. यहाँ किसी को किसी की पड़ी ही नहीं है. जलन का सवालय नहीं उठता."

-"तो मकान-ज़मीन बेचने की क्या ज़रुरत है.....ज़मीन बटिया से दे दो और मकान ताला बंद कर करके रखो या किराये पर दे दो."

-"अरे वहां ज़मीनो कोई हथिया लेगा और किरायेदार कभी निकलेगा नहीं. और अगर ताला बंद करके आएं तो कोई घुस के क़ब्ज़ा कर लेगा,दो पैसाओ नहीं मिलेगा.फिर यहाँ से कौन जायेगा कोर्ट कचहरी करने ? ज़्यादा करेंगे तो कोई हमें गोली मार देगा. अब जान है तो जहाँ है.......यहीं ठीक है.....यहीं बस जाएंगे !"

फिर इदरीस ने एक कमरा किराये पर लिया और कुछ दिनों के लिए वापस गावं चला गया. मकान-ज़मीन का सौदा करने,घर वालों को बम्बई लिवा लाने के लिए.

गाँव में जब लोगों को मालूम हुआ कि इदरीस सब बेच-बाच कर बम्बई बसना चाहता है तो क्या ज़मीन और क्या मकान दोनों के औने पौने दाम लगने लगे. सब जानते थे कि ये तो जल्दी में हैं जितना मिलेगा ले लेंगे. इदरीस ने सोचा

जो मिला वो मिला,अल्ला चाहेगा और कमा लेंगे लेकिन यहाँ की चोरी-डकैती-बदमाशी से तो बचेंगे.जो अपने परिवार की परवरिश करता है वो उसकी सुरक्षा भी चाहता है. इस सब में उसे दो महीने लग गए.मकान वो ठीक करके गया था.वापस आ कर घर वालों को उसने वहां ठहराया.दो दिन सामान-वामान लगाया,आराम किया और तीसरे दिन से फिर फज्र की आज़ान के बाद शब्बीर की बेकरी पर और फिर साइकिल ले कर टन्टनाता हुआ चल दिया सोसाइटी सोसाइटी. वक़्त ठीक-ठाक कटने लगा.

बम्बई का माहौल पहले कभी मलबरियों के लिए खतरनाक हुआ करता था फिर ज़माना बदला और न जाने कब यहाँ यू.पी./बिहार वालों के लिए माहौल गड़बड़ा गया. वही शहर जिसमें दूध वाले,पान वाले,अंडे वाले,चाबी वाले,सब्ज़ी वाले, बढ़ई (सुतार) ....तक़रीबन सभी यू.पी के थे और सब बड़े दोस्ताना अंदाज़ के सबके चहेते थे वो ही अब 'साले भैय्ये' हो गए और आँख की किरकिरी बन गए. अख़बारों में 'भैय्यों' के खिलाफ ज़हर घोला जाने लगा. टी.वी.की बहसों में कहा जाने लगा कि ये 'भैय्ये' 'हमारे' हिस्से कि रोटी छीन कर खा रहे हैं.'हमारे' नौकरी के अवसर कम कर रहे हैं. इनको यहाँ से भगा देना चाहिए और इनका यहाँ आना हमेशा के लिए बंद कर देना चाहिए.

फिर अचानक एक दिन बम्बई के पास वाले कल्याण स्टेशन पर कुछ इंटरव्यू देने आये 'भैय्यों' की पिटाई हो गयी और उनसे कहा गया कि वे फ़ौरन जहांसे आये हैं वहीँ वापस चले जाएँ, नहीं तो......!

'भैय्यों' में डर बैठ गया. लेकिन डर से क्या काम चलना था. इलेक्शन आ गए थे और जीतने का इससे बढ़िया मुद्दा इस माहौल में और कोई था नहीं इसलिए मामले को तूल पकड़ाया गया. दंगे करवा दिए गए. छोटे मोटे पथराव, इधर उधर हो-हल्ला ! पुलिस हरकत में आ गयी और कुछ लुक्के गिरफतार कर लिए गए. बस ! नेताओं का काम हो गया. उन्होने मासूम लोगों को बे-वजह गिरफ्तार करने और 'आपले-माणुस' के साथ बर्बरतापूर्ण व्यवहार करने के लिए पुलिस के खिलाफ मोर्चा खोल दिया. कार्यकर्ताओं को मौक़ा मिल गया.दंगे पूरे फॉर्म में भड़क उठे.पहले बम्बई और फिर पूरे महाराष्ट्र में. राजनीति पूरे ज़ोर पे थी. पुलिस ने मामले की अहमियत समझ कर मुंह फेर लिया. ऑटो रिक्शा वाले/टैक्सी वाले 'भैय्यों' को उनकी गाड़ियों से निकाल निकाल कर पीटा गया. उनकी बस्तियों में आग लगा दी गयी. बसें जलाई गयीं.रेलों का चक्का जाम कर दिया गया.यातायात रोक दिया गया.चारों तरफ कर्फ़्यू लगा दिया गया. जो बच बचा कर निकल सकते थे वो 'भैय्ये' अपने 'मुलुक' भाग गए .बाक़ी जोरोज़ कमा कर खाने वाले थे भूखों मरने की कगार पर आ गए.

पांच दिन बाद माहौल ज़रा संभला तो कर्फ़्यू में सुबह-शाम दो दो घंटों की रियायत की गयी. रोज़ाना कमाने-खाने वाले निकले .इदरीस भी निकला.दिलों में डर तो था लेकिन ये भी था के पांच दिनों से लोगों को कुछ नहीं मिला है,आज तो माल अच्छा बिकेगा. इदरीस की हिम्मत देखकर चन्द्र प्रकाश चूड़ी वाला और चाबी बनाने वाला मोहम्मद भी साथ हो लिए. तीनो फेरी वाले थे. इन तीनो को बे-फ़िक्री के साथ निकलते देख कर तिवारी पान वाले ने भी दुकान खोल दी. तिवारी की तो बौनी ही पुलिस चौकी के हवलदार भोसले ने कर दी. बोला," मायला !...तम्बाकू दे मला....किती दिवस झाले माझा चुना पण संपला!" (तम्बाकू दे मुझे..कितने दिन हुए मेरा चूना तक समाप्त हो गया)

उस दिन वाक़ई धंधा अच्छा हुआ.इदरीस का सब माल बिक गया और उसने वापसी में एक जगह रुक कर अपनी क़मीज़ की अंदर वाली जेब से निकाल कर पैसे गिने और आज की आमदनी के लिए अल्लाह का शुक्र अदा किया. इतने में चूड़ी वाला भी आ गया. बोला," वापस चल रहे हो?" इदरीस ने कहा,"हाँ !...कर्फ्यू का वक़्त शुरू हो जायगा तो घर पहुँचना मुश्किल हो जायेगा."

-"ठीक है....चलो में भी चलता हूँ."

दोनों वापसी के लिए मुड़ लिए .

मुड़े ही थे कि सामने से एक बड़ा सा गोला-जो कहीं से फेका गया था- धम्म से आकर गिरा और भड़ाम से फटा . बम बहुत 'पावर-फुल' था. चूड़ियों का बक्सा खप्पचियां खप्पचियां हो गया.चूड़ियाँ छार -छार हो कर चारों तरफ बिखर गयीं.अण्डों की ट्रे का प्लास्टिक टुकड़े टुकड़े हो कर फैल गया.इदरीस और उसकी साइकिल दोनों तक़रीबन हवा में उड़े और फिर सड़ाक से गिर पड़े. उसकी एक टांग साइकिल पर दूसरी सड़क पर,एक हाथ फैला हुआ दूसरा बग़ल में - चन्द्र प्रकाश की छाती पर ! दोनों आदमियों की ऑखें खुली हुयी. दोनों के बदन लहू-लुहान. दो सेकंड बाद उनके सर के पास आ कर गिरा एक मरियल सा सड़क का कुत्ता. तीनो मरे हुए !

बारूद का धुआं ,वीरानी , बहता हुआ खून ,मौतें और एक अजीब सा गहरा सन्नाटा - सब मिल-मिला कर वहां एक अजीब सा माहौल पैदा कर रहे थे.

कुछ देर बाद जायज़ा लेने धीरे धीरे सहमता सहमता सा एक हवलदार उस तरफ आया. तभी उसकी जेब में रखे सेल्ल फोन की रिंग टोन बजी- "ए मेरे प्यारे वतन...तुझ पे दिल कुर्बां ...".हवालदार ने फोन लिया और वो इधर उधर देख कर फोन पर बात करता हुआ वापस चला गया.

*****